© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
International Journal of Scientific Research in Science and Technology

# दलित अधिकार एवं राजनैतिक सहभागिता

ओम प्रकश कुमार,
एम.ए., पीएच,डी राजनीतिशास्त्र,
ग्राम–गेन्दा बिगहा, पो.धवल बिगहा,
थाना–हुलासगंज, जिला–जहानाबाद, बिहार, भारत।

'दलित' शब्द अंग्रेजी के डिप्रेस्ड क्लास का हिन्दी रूपान्तर है जिसका अर्थ होता है– दबाया हुआ, पीड़ित, शोषित एवं जिनका हक छीना गया है। भारत में वर्तमान समय में 'दलित' शब्द का अनेक अर्थों में उपयोग होता है। वैसे तो इसके कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं हो सकती, किन्तु यह कहा जा सकता है कि उन वर्गों के दलित कहा जाता है जो वर्तमान में अनुसूचित जाति के अन्तर्गत आते हैं। वह हर व्यक्ति जिसका शोषण उत्पीड़न हुआ हो, दलित वर्ग में आते हैं। चाहे वे हिन्दू, मुस्लमान या ईसाई हों। रामचन्द्र वर्मा ने अपने शब्दकोश में दलित का अर्थ लिखा है– मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनष्ट किया हुआ।[1] पिछले छह–सात दशकों में 'दलित' पद का अर्थ काफी बदल गया है। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के आंदोलन के बाद यह शब्द हिन्द समाज व्यवस्था में सबसे नीचले पायदान पर स्थित सैकड़ों वर्णों से अस्पृश्य समझी जाने वाली जातियों की आंदोलनधर्मिता का परिचायक बन गया है। भारतीय संविधान में इन जातियों को अनुसूचित जाति के नाम से जाना जाता है[2], भारतीय समाज में वाल्मीकि या भंगी को सबसे नीची जाति समझा जाता रहा है और उसका पारंपरिक पेशा मानव मल की सफाई करना रहा है। परन्तु आज के समय में इस स्थिति में बहुत बदलाव आया है। दलित का अर्थ शंकराचार्य ने मधुराष्टकम् में द्वैत से लिया है[3]। उन्होंने ''दलित मधुरं'' कहकर श्रीकृष्ण को संबोधित किया है।

भारत में दलित आंदोलन की शुरूआत ज्योतिराव, गोविंद राव पुले के नेतृत्व में प्रारंभ हुई। ज्योतिबा फूले माली थे। वे समाज के ऐसे तबके से थे जिन्हें उच्च जाति के समान अधिकार प्राप्त नहीं थे। इसके बावजूद ज्योतिबा फूले ने हमेशा ही तथाकथित 'नीची' जाति के लोगों के अधिकारों की पैरवी की। भारतीय समाज में ज्योतिबा फूले ने सभी दलितों को शिक्षित करने का प्रयास किया था। ज्योतिबा ही सबसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने दलितों के अधिकारों के साथ–साथ दलितों के शिक्षा की भी पैरवी की। ज्योतिबा फूले ने महिला शिक्षा के लिए कारगर व सराहनीय कदम उठाए। भारतीय इतिहास में ज्योतिबा ही पहले शक्स थे जिन्होंने दलितों की शिक्षा के लिए न केवल विद्यालय की वकालत की बल्कि सबसे पहले दलित विद्यालय की स्थापना की। ज्योतिबा में भारतीय समाजमें दलितों को एक ऐसा पथ दिखाया था जिस पर आगे चलकर दलित समाज और अन्य समाज के लोगों ने दलित समाज के अधिकार की लड़ाई लड़ी। यूं तो ज्योतिबा ने भारत में दलित आंदोलन का सूत्रपात किया था लेकिन इसे समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का काम बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर ने किया। एक बात और जिसका जिक्र किए बिना दलित आन्दोलन की

बात बेमानी होगी। वो है बोद्ध धर्म। ईसा पू0 600ई0 में ही बौद्ध धर्म ने हिन्दू समाज के नीचले तबकों के अधिकारों के लिए आवाज उठाई। गौतम बुद्ध ने इसके साथ ही बौद्ध धर्म के जरिए एक सामाजिक और राजनीतिक क्रांति लाने की भी पहल की। इसे राजनीतिक क्रांतिकारी कहना इसलिए आवश्यक है क्योंकि उस समय सत्ता पर धर्म का आधिपत्य था और समाज की दिशा धर्म के द्वारा ही तय की जाती थी। ऐसे में समाज के नीचले तबके को क्रांति की जो दिशा भगवान बुद्ध ने दिखाई वो आज भी प्रासंगिक है। भारत में चार्वाक के बाद भगवान बुद्ध ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने ब्राह्मणवाद, जातिवाद और अंधविश्वास के खिलाफ न केवल आवाज उठाई बल्कि एक नया दर्शन भी दिया जिससे समाज के लोग बौद्धिक दासता से मुक्त हो सकें।

भारत में ब्रिटिश शासन लोगों के लिए दासता का समय रहा हो लेकिन दलितों के लिए कई मायनों में स्वर्णकाल था। आज दलितों को जो भी अधिकार मिले हैं उसकी पृष्ठभूमि इसी शासन की देन थी। यूरोप में हुए पुर्नजागरण और ज्ञानोदय आंदोलनों के बाद मानवीय मूल्यों का महिमा मंडन हुआ। यही मानवीय मूल्य यूरोप में एक ऐसे समाज की रचना की गई जिसमें मानवीय मूल्यों को प्राथमिकता दी गई। ये अलग बात है कि आद्यौगीकरण के चलते इन मूल्यों की जगह सबसे पूंजी ने भी यूरोप में ली। लेकिन इसक बावजूद यूरोपमें ही सबसे पहले मानवीय अधिकारों को कानूनी मान्यता दी गई। इसका सीधा असर हम भारत के संविधान में देख सकते हैं। भारतीय संविधान की प्रस्तावना से लेकर सभी अनुच्छेद इन्हीं मानवीय अधिकारों की रक्षा करते नजर आते हैं। भारत में दलितों की कानूनी लड़ाई का जिम्मा सबसे सशक्त रूप में डॉ0 अम्बेडकर ने उठाया। डॉ0 अम्बेडकर दलित समाज के प्रणेता हैं बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर ने सबसे पहले देश में दलितों के लिए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों की पैरवी की।[4]

भारतीय समाज के तात्कालिक स्वरूप का विरोध और समाज के सबसे पिछड़े और तिरस्कृत लोगों के अधिकारों की बात की। राजनीतिक और सामाजिक हर रूप में इसका विरोध स्वाभाविक था। यहाँ तक कि महात्मा गाँधी भी इन मांगों के विरोध में कूछ पड़े। बाबा साहब ने दलितों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व (पृथक निर्वाचिका) की मांग की जो दलित राजनीति में आज तक की सबसे सशक्त और प्रबल मांग थी। देश की स्वतंत्रता का बीड़ा अपने कंधे पर मानने वाली कांग्रेस की सांसें भी इस मांग से थम गई थी। कारण स्पष्ट था कि समाज के ताने–बाने में लोगों का सीधा स्वार्थ निहित था और कोई भी ताने–बाने से जरा–सा भी बदलाव नहीं चाहता था। महात्मा गांधी जी को इसके विरोध की लाठी बनाई गई और बैठा दिया गया आमरण अनशन पर। आमरण अनशन गाँधी जी का प्रबल हथियार था। इस हथियार से वे आए दिन अपनी बातों को मनवा लिया करते थे लेकिन बाबा साहब भी किसी भी कीमत पर अपनी मांग से पीछे हटना नहीं चाहते थे, वे जानते थे कि इस मांग से पीछे हटने का सीधा अर्थ है दलितों के लिए उठाई गई सबसे महत्वपूर्ण मांग के खिलाफ हामी भरना लेकिन उन पर चारों ओर से दबाव पड़ने लगा और अन्ततः पूना पैक्ट के नाम से एक समझौते में दलितों के अधिकारों की मांग को धर्म की दुहाई देकर समाप्त कर दिया

गया। इन सबके बावजूद डॉ0 अम्बेडकर ने हार नहीं मानी और समाज के नीचले तबकों के लोगों की लड़ाई जारी रखी। अम्बेडकर के प्रयासों का ही ये परिणाम है कि दलितों के अधिकारों को भारतीय संविधान में जगह दी गई। यहाँ तक कि संविधान के मौलिक अधिकारों के जरिए भी दलितों के अधिकारों की रक्षा करने की कोशिश की गई।

दलित वर्ग का उपस्थिति बौद्ध काल से ही मुखरित रही है किन्तु एक लक्षित मानवाधिकार आंदोलन के रूप में बीसवीं सदी की देन है।[5] दलितों को हिन्दू समाज व्यवस्था में सबसे नीचले पायदान पर होने के कारण न्याय, शिक्षा, समानता तथा स्वतंत्रता आदि मौलिक अधिकारों से भी बंचित रखा गया। उन्हें अपने ही धर्म में अछूत या अस्पृश्य माना गया। लेकिन जैसे–जैसे दलित समाज में शिक्षा का प्रचार–प्रसार व जागरूकता बढ़ती गई वे अपने अधिकारों के लिए लड़ते रहे और वे उन्हें प्राप्त किया। उनमें सामाजिक जागरूकता बढ़ी तथा राजनीतिक सहभागिता भी बढ़ी।

जब किसी व्यक्ति या जन समूह की दिलचस्पी राजनैतिक क्रिया, व्यवहार या व्यवस्था में थोड़े या अधिक मात्रा में संलिप्त हो या राजनैतिक गतिविधि में संलग्न हो, तब ऐसी क्रिया को राजनैतिक सहभागिता कहा जाता है। प्रजातंत्र में राजनैतिक सहभागिता एक महत्वपूर्ण संकल्पना है क्योंकि आज समाज का प्रत्येक नागरिक राजनीति को समझने में रूचि रखता है। राजनैतिक सहभागिता में समाज के सदस्य राजनैतिक गतिविधि में प्रत्यक्ष, परोक्ष, कम या अधिक मात्रा में भाग लेते हैं। ऐसी क्रिया निरन्तर हो सकती है, यदा कदा हो सकती है या फिर कुछ एक बार हो सकती है।

एश एवं अलथोप[6] ने इसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि राजनैतिक सहभागिता आम लोगों की विधि सम्मत गतिविधियाँ हैं जिनका उद्देश्य राजनैतिक पदाधिकारियों का चयन और उनके द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों के प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना होता है।

इसी प्रकार आल्मण्ड एवं पावेल[7] ने लिखा है कि राजनैतिक सहभागिता के उन स्वैच्छिक क्रियाओं जिनके द्वारा समाज के शासकों के चयन एवं प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष जननीतियों के निर्माण में भाग लेते हैं, के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

राजनैतिक सहभागिता व्यक्ति का ऐसा राजनैतिक कृत्य है जिससे राजनैतिक पद धारकों का चयन व उसकी निर्णयकारिता प्रभावित होती है। दूसरे शब्दों में राजनैतिक क्रिया एवं गतिविधि राजनैतिक सहभागिता है जो शासन प्रक्रिया को प्रभावित करती है। राजनैतिक सहभागिता में व्यक्तियों, समूहों और दलों की भूमिकाएँ महत्वपूर्ण होती है। यह राजनीतिकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान करता है जो राजनैतिक व्यवस्था के अन्तर्गत ही स्थापित हो जाती है।

राजनैतिक व्यवस्था में राजनैतिक सहभागिता का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि लोकतंत्र की सफलता की कुंजी राजनैतक सहभागिता ही होती है। राजनैतिक सहभागिता जितनी अधिक होगी, उतना ही लोकतंत्र को वास्तविक और सफल माना जायेगा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश एक नये संविधान निर्माण और प्रजातांत्रिक सरकार का गठन हुआ जिसके अनुसार भारत के सभी नागरिकों को समानता, सामाजिक न्याय तथा स्वतंत्र रूप में विचार तथा व्यवहार का अवसर प्रदान किया गया।[8]

संवैधानिक छूट तथा सुविधाओं में विशेष रूप से दलितों में भी राजनैतिक चेतना तथा वर्ग जागरूकता का विकास हुआ। फलतः उनमें राजनैतिक सहभागिता तथा सक्रियता की मात्रा की गति तीव्र हुई। दलित जातियों से पूछ–ताछ एवं अध्ययन के क्रम में यह पाया गया कि अधिकांश दलित जागरूक उत्तरदाता कांग्रेस, भाजपा, लोजपा, जे0डी0 (यू0), आर0जे0डी0, भाकपा/माकपा को जानते हैं तथा लोजपा को दलितों के अधिक हितैषी राजनीतिक दल मानते हैं। वे विधानसभा एवं लोकसभा के चुनावों में दूसरे सभी दलों के कार्यकर्ता की दलितों को लुभाने, संगठित करने तथा वोट देने के लिए प्रेरित करते हैं। दलितों को भी एक दूसरे समूहों के बारें में जानकारी होती है। दलितों में उच्च राजनैतिक अभिज्ञान की वृद्धि हुई है।

वर्तमान भारत में दलितों की राजनैतिक सहभागिता बढ़ी है। वे मतदान में बढ़–चढ़कर हिस्सा लेते हैं तथा अपने वर्ग समुदाय को राजनैतिक रूप से जागरूक भी करते हैं। आज वे विभिन्न प्रकार की पार्टियों का निर्माण करके भारतीय चुनावी प्रक्रिया में भाग ले रहे हैं तथा महत्वपूर्ण पदों पर आसीन हो रहे हैं। लोजपा, बसपा, भीम आर्मी इत्यादि कई पार्टियाँ दलितों की उत्थान एवं राजनैतिक सहभागिता बढ़ाने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। आज वे विभिन्न प्रकार के सार्वजनिक कार्यक्रम, आमसभा, हड़ताल, जूलूस में बढ़–चढ़कर भाग ले रहे हैं। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि दलित वर्ग अपने अधिकारों के प्रति सचेष्ट हैं तथा राजनैतिक सहभागिता सुनिश्चित करने में किसी से पीछे नहीं है।

**सन्दर्भ :**


1. संक्षिप्त शब्द–सागर, रामचन्द्र वर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
2. The Times of India : 7th April 2019
3. मधुराष्टकम्, शंकराचार्य
4. कितना सच हुआ दलितों के लिए भीमराव अम्बेडकर का सपना : द इंडियन वाचर
5. भारतीय दलित आंदोलन : बुक्स फॉर चेन्ज
6. Marx, Karl : selected works, End ed. Moscow, 1946, Vol. P. 131
7. Wber, Max : From Max Weber : Essays in Sociology
8. धर्मवीर : भारतीय समाज एवं संस्कृति, भोपाल हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1994